शोध मंथन Vol. XIII No.IV Oct.-Dec. 2022 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

हिन्दी साहित्य के स्वर्ण युग में समाज सुधार के प्रयास

प्राप्तिः 18.12.2022
स्वीकृतः 25.12.2022

94

डॉ० मन्जु साँगवान
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
महिला महाविद्यालय,
झोझूकलां (चरखी दादरी)
ईमेलः *manjusingh0009@gmail.com*

सारांश

साहित्य समाज के दर्पण से तात्पर्य साहित्यिक विद्यायों के द्वारा युग विशेष की गतिविधियों का उल्लेख करना है। डॉक्टर श्यामसुन्दर दास द्वारा प्रयुक्त विशेषज्ञ 'स्वर्णयुग' भक्तिकाल में लिखे गये साहित्य के लिए न सिर्फ उपयुक्त है बल्कि आज तक विवाद का विषय नहीं बना है।

भक्तिकाल भगत कवियों के आत्म कल्याण के प्रयोजन से नहीं अपितु मानव–मात्र की भलाई के लिए साधना रूप से निराधारा की अराधना का मार्ग अपनाया है या साकार की उपासना का।

प्रस्तावना

तत्कालीन समाज की जाति–पाति छुआछुत वर्गभेद टोने–टोटके बाहरी आडम्बर, पाखण्ड जैसी अनेक बुराईयों की गर्त में धंस चुका था। उन्हें उभारने के लिए सन्त काव्य के प्रवर्तक कबीरदास ने अपने मस्तमौला व अक्खडपन के द्वारा सामाजिक विकृतियों का प्रहार किया। वहीं 'प्रेम की पीर' के कवि जायसी आत्मा–परमात्मा के रूप में मिलन करवाकर, हिन्दू–मुस्लमान के भेद को मिटाकर समाज को सुधारने का प्रयास किया। कृष्ण को लोक–रंजन के रूप में प्रयोग कर सुदामा जी ने कृष्ण भक्ति काव्य को भी समाज सापेक्ष रखा। समन्यवादी के रूप में प्रयोग कर सूरदास जी ने कृष्ण भक्ति काव्य को भी समाज सापेक्ष रखा। समन्यवादी के रूप में जाने गए तुलसीदास को समान धरातल पर प्रतिष्ठित करने की कोशिश की।

भक्तिकालीन साहित्य में समाज सुधार के प्रयास

भारत पर होने वाले बाहरी आक्रमण राजनीतिक परिस्थियों , धर्म के नाम पर लुटने वाले लोग तथा उस समय की सामाजिक स्थितियों का वर्णन हम साहित्य में समाज सुधारक कवियों के द्वारा अपनी कलम से किए गए प्रयोगो में पढ़ते हैं । भक्ति साहित्य की रचना ऐसे समय पर हुई जब हिन्दू धर्म जाति–पाति की कठोरता तथा धार्मिक विकृतियों के कारण बहुत क्षीण हो चुका था तथा मुसलमान भी इसी तरह की स्थितियों का कष्ट सहन कर रहे थे। उस समय कवियों ने मानव प्रेम, भाईचारा तथा उदारतरा का संदेश देकर समाज को उच्च आदर्श तथा नैतिक मुल्य देने का प्रयास करते हुए रहीम ने ''दोहावली'' में कहा है कि–

रहिमन धागा प्रेम का मत तोड़ो चटकाए।
टूटे पे ना जुरे जुरे तो गाँठ परी जाए।।

निर्गुण भक्ति के द्वारा मानव को ऐसे नियमों से निबन्द्ध करना जहां वर्ग–विशेष का भेद न हो। साधना का ऐसा द्धार खोला जिसमें मुस्लिम व हिन्दू दोनों धर्मो का भेद लुप्त हो जाए। धर्मदास द्वारा संकलित ''बीजक'' में कबीरदास जी ने कहा है कि –

जाति–जाति पुछे नाहि कोई।
हरि भजे सो हरि को होई।।

कबीरदास जी ने ऐसे ईश्वर को प्रमाणित किया है जो घट–घटवासी है जो निर्गुण क्या निराधार है। जिसने हिन्दू के बहुदेववाद व मुस्लिम के एकेश्वाद पर प्रहार किया। धर्म के नाम पर लड़ने वाले हिन्दू व मुस्लिम को समझाने का प्रयास करते हुए कबीर दास जी ने कहा है कि–

हिन्दू कहे मोहे राम प्यारा, तुरक कहे रहिमाना।
आपस में दोउ लरि–लरि मुए मरम न काहू जाना।।

जाति व वर्ग के भेज की जो दीमक भारतीय समाज व संस्कृति की धीरे–धीरे खोखला कर रही थी उसे सुलझाने के लिए कबीरदास जी ने अक्खडपन की दया का प्रयोग किया वही प्रेम का मरहम लगाकर उस धाव को भरने की कोशिश की है। ''बीजक'' में कबीरदास जी ने कहा है कि–

ऐसी वाणी बोलिए मन का आपा खोए।
औरन को शीतल करें, आपहूँ शीतल होए।।

सूफी कवि जो मुस्लमान होकर हिन्दू कथाओं के आधार पर रचना करते थे उन्होंने धार्मिक असहिष्णुता व पाखंड मिटाकर समाज में समानता लाने की एक अहम भूमिका निभाई। संघर्ष की स्थिति में असन्तुलन स्थापित करने का जो प्रयास भक्ति साहित्य में हुइा उसे हम गांधी जी के जीवन–मूल्यों में प्रेरणा के तौर पर देख सकते हैं। सूफी कवि विभिन्न भारतीय धर्म–साधनाओं की अवधारणाओं को ग्रहण करके भारतीय जनता को उदारता–पूर्वक अपनाने के लिए समन्वय का मार्ग अपना रहे थे। इसी प्रकार सगुणोपासक राम भक्त कवि निर्गुण–सगुण, स्वर्ण–शुद्ध, द्वेत–अद्धेत का समन्वय करने में लगे हुए थे। वही कृष्ण भक्त सूरदास ने एक ऐसे सिद्धान्त को प्रतिपादित किया जिससे राजा–प्रजा, स्त्री, स्वामी, सेवक, ऊॅच नीच का भेद अपने आप समाप्त हो जाए। तुलसीदास जी के समन्वयी साहित्य के बारे में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा–

उनका सारा काव्य समन्वय की विरोट चेष्टा है। लोक और शास्त्र का समन्वय, मार्हस्थ और बैराग्य का समन्वय, विज्ञान व ज्ञान का समन्वय, शुरू से आखिर तक का समन्वय का काव्य है।

जिस भावनात्मक एकता को स्थापित करने का प्रयास संन व सूफी कवियों ने किया था, उसे तुलसीदास ने सुदृढ़ पृष्ठभूमि प्रदान करते हुए, विद्यमान परस्पर विरोधी स्थितियों में समन्वय स्थापित करते हुए जन–जीवन में व्याप्त घोर अशान्ति, पापाचार, अत्याचार, विषमता आदि को दूर करने का प्रयास किया। समाज, परिवार व राजनीति के क्षेत्र में जो समान धरातल बनाने का प्रयास तुलसीदास व समकालीन कवियों ने किया वह हिन्दी साहित्य में सराहनीयता के चरम बिन्दू पर विद्यमान है। समाज धार्मिक व राजनीतिक स्थिति चौडी होती जिस खाई में घंसता जा रहा था तुलसीदास ने लोकमंगल की भावना रूपी कच्चा माल लेकर भरने का प्रयास करते हुए– 'रामचरितमानस' जैसे महाकाव्य का निर्माण किया। आदर्श समाज की प्रेरणा स्त्रोत के रूप में 'रामचरितमानस' के लिए 'शिवनंदन सहाय'का कथन उल्लेखनीय है–

सामांती राजाओ का भोग– विलास डूबे रहने की वजह से लोगों का जीवन–स्तर प्रभावित था। ऐसी स्थिति में तुलसीदास जी ने कलम रूपी तलवार उठाकर उन राजाओं पर रामराज्य (आदर्श समाज) स्थापित करने के लिए रचना रूपी समझौता प्रस्तुत किया। उन्होंनें एसे समाज की कल्पना की जहां प्रजा को सर्वसुख मिल सके। वही कबीरदास ने नारी की कमनीय रूप कंचन माया की तरह प्रस्तुत कर लोगों का मोह धन की एकाग्रता पर से हटाने का प्रयास किया जोकि सामाजिक विषमता को समाप्त करने के लिए महत्वपूर्ण था।

तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरितमानस' को उतरकांड में अवतरित पंक्तियों रामराज्य का वर्णन करती प्रतीत होती है–

दैहिक दैविक भौतिक ताप राम राज नाहि काहुहिव्याणा।
सबनर करहिं परस्पर प्रीती चलहि स्वधर्म रितश्रुति की।।

समाज की जननी नारी के लिए सतं कवि कबीरदास जी जैसे समाज सुधारक ने समाज में नैतिक मूल्यों को निर्धारित कर पतिव्रता नारी को ''पतिव्रता नागी रहे, वाही पति की लाज'' कहते हुए उच्च स्थान प्रदान किया है। तुलसीदास ने मध्यकालीन सामान्तों के अनाचार, उत्पीड़नों से परिचित नारी को अनावश्यक स्वतन्तत्रता देने का विरोध किया लेकिन नारी के मनोभावों को समझते हुए उसे पुरूष का अभिन्न अंग माना। समाज में फैली बहु–पत्नीवादी जैसी पारिवारिक घुटन को जायसी ने अपने काव्य द्वारा उजागर किया। वही सूरदास जी ने नारी के दामन वात्सल्य प्रेम से भरकर समाज में सर्वोपरि दर्जा दिया। जिस नीति व सदाचार के नियमों में बंधकर मानव समाज को बचाकर रखा जा सकता है वह धर्म का पालन है। भक्त कवियों ने धार्मिक भावनाओं के द्वारा अंहकार का त्याग, कामादि विकारों का नाश, सहिष्णुता काव्य के द्वारा समाज को दिए। सूरदास जी ने अंहकार त्याग कर स्वयं को नीचा दिखाते हुए कहा 'प्रभू हो सब पतितन को टीको'। वही तुलसीदास ने राम के मुख से कहलवाया निर्मल मन सोई जन मोहि भावा। भक्तिकालीन युग में लिखित साहित्य व्यक्ति व समाज की सापेक्ष स्थिति की स्वीकृति है। व्यक्ति व समाज एक–दूसरे के पूरक हैं। दोनों का कल्याण ही धर्म का लक्ष्य है। प्रत्येक व्यक्ति धर्म की साधना करता है जो व्यक्तिपरक है लेकिन धर्मानुकूल आचरण करते हुए नैतिक मूल्यों को निभाना समाज के पक्ष में है।

उपसंहार

भक्तिकालीन कवियों ने धर्म को उपासना का विषय बनाकर अपने समय के समाज को दोषमुक्त कर परिष्कृत करने की विराट चेष्टा की है। वर्ग– भेद, समप्रदायवद्धता के कारण मनाव समाज धृणा तथा विभेद का शिकार था। कलमरूपी वाण द्वारा 'निर्गुण राम'' रूपी तीर चलाकर संत कवियों ने समाज में फैली बुराईयों पर प्रहार किया। जिस प्रकार परमानन्ददास कबीरदास व चण्डीदास जैसे सन्तों ने लौकिक जीवन में बैकुण्ठ तलाशने की कोशिश उसी प्रकार जायसी ने भी प्रेम के माध्यम से जीवन को बैकुण्ठ बना देने की कोशिश की। सूरदास व तुलसीदास जी दोनों के नायक लोकमंगल–परक उददे्श्यों से जुडे हैं। सूरदास ने कृष्ण लीला पुरूषोतम इसलिए है क्योंकि उन्होनें आवश्यकतानुसार समस्याओं के समाधान को ढूढो और तुलसीदास के राम मर्यादा पुरूषोतम इसलिए है क्योंकि उन्होनें समस्याओं के समाधान के लिए नैतिक आदर्शपरक मर्यादित विकल्पो को ही आधार बनाया।

सन्दर्भ

1. शुक्ल, आचार्य रामचन्द्र. हिन्दी साहित्य का इतिहास.

2. गुलाटी, डॉ. यश. बृहत्त साहित्यिक निबंध.
3. द्विवेदी, डॉ. हजारी प्रसाद. हिन्दी साहित्य की भूमिका.
4. शुक्ल, आचार्य रामचन्द्र. कबीर ग्रन्थावली.
5. वर्मा, डॉ. धीरेन्द्र. सूरसागर– सार.
6. शुक्ल, आचार्य रामचन्द्र. जायसी ग्रंथावली.
7. दास, श्याम सुन्दर. साहित्य लोचन.
8. शुक्ल, आचार्य रामचन्द्र. गोस्वामी तुलसीदास.